अथ षष्ठोऽध्यायः

ध्यानयोग

(अभ्यास)

28/5

श्रीभगवानुवाच।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।

स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।।१।।

श्रीभगवान् उवाच=श्रीभगवान् ने कहा; **अनाश्रितः**=न चाहता हुआ; **कर्मफलम्**=कर्मफल को; **कार्यम्**=कर्तव्य; **कर्म**=कर्म; **करोति**=करता है; **यः**=जो; **सः**=वह; **संन्यासी**=संन्यासी है; **च**=और; **योगी**=योगी; **च**=भी; **न**=नहीं; **निरग्निः**=अग्नि को त्यागने वाला; **न**=नहीं; **च**=तथा; **अक्रियः**=क्रियाहीन।

अनुवाद

श्रीभगवान् ने कहा, जो पुरुष कर्मफल में अनासक्त रहकर अपने कर्तव्य का पालन करता है, वही सच्चा संन्यासी और योगी है, अग्नि को त्यागने वाला अथवा कर्म को त्यागने वाला नहीं।।१।।

तात्पर्य

इस अध्याय में श्रीभगवान् ने मन-इन्द्रियों को वश में करने के साधन के रूप में अष्टांगयोग का वर्णन किया है। परन्तु सामान्य जनता के लिए, विशेषतः कलियुग में, यह बड़ा कठिन है। अष्टांगयोग की पद्धति का वर्णन करते हुए श्रीभगवान् ने भी इस सत्य पर बल दिया है कि कृष्णभावनाभावित कर्म अर्थात् 'कर्मयोग' इससे श्रेष्ठ